International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 25-04-2019; Accepted: 10-05-2019; Published: 25-05-2019
Volume 1; Issue 1; 2019; Page No. 23-25

अज्ञेय का काव्य : विचारणीय बिन्दु

डॉ. मनोज कुमार कैन
हिंदी विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. महाविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

सारांश
अज्ञेय बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं। हिंदी साहित्य के महत्त्वपूर्ण रचनाकार होने के साथ–साथ वे एक क्रांतिकारी, सैनिक, फोटोग्राफर, भारतीय व पाश्चात्य काव्य और विविध कलाओं के जानकार भी थे। उनका कवि कर्म आजादी के पूर्व छायावाद के अंतिम दौर से आरंभ होकर नयी कविता के बाद तक के परिवेश और चिंतन को अपने अंदर समेटे हुए है। उन्होंने काव्य के दोनों अंग संवेदना और शिल्प में तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न प्रयोग किया है, जिसके कारण हिंदी काव्य परम्परा समृद्ध हुई। अज्ञेय प्रयोगवाद के प्रवर्तक के रूप में हमारे सामने आते हैं और भाषा में नये प्रतीकों, नये उपमानों और नए बिम्बों की सृष्टि करते हैं। उन्होंने साहित्य में उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया है जो भाव को श्रोता तक सम्प्रेषित कर सके। फिर चाहे वह शब्द तत्सम, तद्भव, अरबी, फ़ारसी, अंग्रेजी या अन्य किसी भाषा का हो।

परिचय: अज्ञेय हिंदी साहित्य के गौरव पुरुष हैं। उन्होंने अपनी कविताओं में नवीन बिम्बों की सृष्टि की और प्राचीन बिम्बों को अनुभव के आधार पर उन्हें नया अर्थ दिया। हिंदी साहित्य में भी उनकी पहचान प्रयोगवादी कवि के रूप में ही प्रतिष्ठित है। उन्होंने प्रयोगशीलता को अपनी कविताओं में व्यापक महत्त्व दिया है। उनके अनुसार प्रयोगशीलता साहित्य को जड़ होने से बचाती है। अज्ञेय ने कविता की भाषा और शब्दों को अर्थ संप्रेषण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना है। अतः उन्होंने अपनी कविताओं में शब्दों का सीमित प्रयोग करते हुए भी अर्थ की गम्भीरता और भावों का सम्प्रेषण कहीं बाधित नहीं होने दिया है। इसके साथ ही साथ उन्होंने अपने काव्य लेखन द्वारा शिल्प के अन्य अंगों बिम्ब, प्रतीक, नाटकीयता, अप्रस्तुत विधान, व्यंग आदि को भी एक नई धार दी है।

मूल शब्द: बहुआयामी, छायावाद, प्रतिबिंबित, पर्यटनानुभवि, सर्जनात्मकता, उन्मेष्टा, देसीपन, वस्तुपरक बिम्ब, प्रकृति बिम्ब, भाव बिम्ब, ऐन्द्रीय बिम्ब, जिजीविषा

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' को हिंदी साहित्य का गौरव पुरुष माना जाता है। अज्ञेय का व्यक्तित्व बहुआयामी है, वह एक क्रांतिकारी, सैनिक, फोटोग्राफर, भारतीय व पाश्चात्य काव्य व विविध कलाओं के जानकार थे। अज्ञेय का कवि कर्म आजादी के पूर्व छायावाद के अंतिम दौर से प्रारंभ होकर नयी कविता के बाद तक के परिवेश और चिंतन को अपने अंदर समेटे हुए हैं। छायावाद युग तक हिंदी कविता में खड़ी बोली काव्य के रूप में पूर्णतः स्थापित हो चुकी थी। जिस समय अज्ञेय ने काव्य साधना आरंभ की उस समय लगभग सम्पूर्ण विश्व में नए–नए कवि अपनी विशेष अनुभूतियों के साथ उभर रहे थे। ये अनुभूतियाँ बहुत हद द्वितीय विश्व युद्ध से प्रेरित होकर उभरी थी। द्वितीय विश्व युद्ध ने मनुष्य को एक मशीनी यंत्र बना दिया था। मनुष्य–मनुष्य के ऊपर विश्वास न करके यंत्र, विस्फोटक उपकरणों पर अधिक विश्वास करने लगा। उसी समय भारत में राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन अपने प्रबल आवेग में था। इन परिस्थितियों के कारण समाज में नए भाव–बोध का उदय हुआ। जिसका रूप अज्ञेय के साहित्य में प्रतिबिंबित होता है। अज्ञेय ने काव्य के दोनों अंग संवेदना और शिल्प में तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न प्रयोग किए, जिसके कारण हिंदी काव्य परम्परा समृद्ध हुई।

द्वितीय विश्व युद्ध के कारण उपजी परिस्थितियाँ कवियों की नई अनुभूतियों को व्यक्त करने में तत्कालीन भाषा सक्षम न हो सकी। इसलिए इन कवियों ने अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए अपने अनुसार भाषा में फेरबदल किए। चूँकि अज्ञेय पर भी पश्चिम का प्रभाव रहा इसलिए अज्ञेय के काव्य में भी भाषा को लेकर बदलाव देखा जा सकता है। "अज्ञेय के संबंध में इतना निर्विवाद कहा ही जा सकता है कि नए कवियों में वे निस्संदेह सर्वाधिक पठित, व्यवसायगत विविधता और उसके अनुभवों से संपन्न सर्वाधिक पर्यटनानुभवि और अन्य विधाओं में भी सर्वाधिक चर्चित और सर्वश्रेष्ठ शिल्पी रहे है। यही नहीं आलोचकों की दृष्टि में वे सर्वाधिक विवादास्पद भी बनें रहें। इसका मुख्य कारण अज्ञेय की भाव तथा शिल्पगत दोनों स्तरों पर कभी न खत्म होने वाली प्रयोगशीलता रही है।"[1] यही कारण है कि अज्ञेय प्रयोगवाद के प्रवर्तक के रूप में हमारे सामने आते हैं और भाषा में नये प्रतीकों, नये उपमानों और नए बिम्बों की सृष्टि करते हैं।

अज्ञेय के काव्य के सम्बन्ध में आलोचकों द्वारा कहा गया कि अज्ञेय साहित्य में 'आत्म' की खोज करते है। उनका साहित्य व्यक्तिगत भावनाओं को व्यक्त करता है। समाज से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन अज्ञेय उन साहित्यकारों में है जो भाषा को बहुत महत्व देते हैं और भाषा में संप्रेषण को मुख्य मानते है। भाषा को महत्व देने के कारण अज्ञेय भाषा की प्रथम इकाई 'शब्द' को अधिक महत्व देते है। अज्ञेय साहित्य में उन्हीं शब्दों का प्रयोग करते है जो भाव को श्रोता तक सम्प्रेषित कर सके। फिर वह शब्द तत्सम हो, तद्भव हो, अरबी, फ़ारसी, अंग्रेजी या अन्य किसी भाषा का। "भाषा और शब्दों के प्रति के प्रति वे अधिकतम संभलकर चले हैं। उनकी कविता में शब्द विषयगत वस्तु के रूप में अपनाए गए है। उनकी सही शब्दों की खोज उनके लिए आत्म की खोज भी है।"[2] अज्ञेय शब्दों के अधिक खर्च से बचते रहे है इसलिए अनावश्यक शब्दों के प्रयोग से बचते रहे है। असाध्य वीणा कविता में राजा व प्रियंवद के प्रथम मिलन और संवाद कौशल रीतिकालीन कवि केशवदास की संवाद योजना का अनुसरण करती हुई प्रतीत है–

"आ गए प्रियंवद। केशकम्बली।
गुफा गेह
राजा ने आसन दिया। कहाः
'कृतकृत्य हुआ मैं तातः पधारे
आप।
भरोसा है अब मुझको
साध आज मेरे जीवन की पूरी होगी।'
लघु संकेत समझ राजा का
गण दौड़। लाए असाध्य वीणा,
साधक के आगे रख उसको, हट
गए।
सभी की उत्सुक आँखे
एक बार वीणा को लख, टिक गई
प्रियंवद के चेहरे पर।"[3]

असाध्य वीणा कविता की इन प्रथम पंक्तियों में कविता की सर्जन क्षमता प्रतिबिंबित होती है। कविता का उद्देश्य सर्जनात्मकता है। इस सर्जनात्मकता से सजग कवि हमेशा जूझता रहता है। "सर्जनात्मकता की समस्या से सतत जूझने वाले रचनाकार के यह लिए उचित है वह भाषिक सर्जन की क्षमता को गहरे ढंग से समझे। अज्ञेय की कई प्रसिद्ध कविताओं में भाषा और अनुभूति के अद्वैत को व्याख्यायित करने का यत्न हुआ है। यह सृजन–क्रिया को आधुनिक सचेतन भाव से समझने का उपक्रम है। 'कलगी बाजरे की', 'शब्द और सत्य', 'जितना तुम्हारा सच है' जैसी कविताओं की मूल वस्तु सर्जन और भाषा का अंतर–सम्बन्ध है।"[4] भाव–बोध और शिल्प में साम्य स्थापित करते हुए सर्जनात्मकता का विस्तार अज्ञेय के काव्य में शुरू से लेकर अंत तक विद्यमान है। शब्द और भाषा के माध्यम से अज्ञेय ने इसकी तलाश की है। अज्ञेय ने

अपनी काव्य यात्रा में तत्सम, तद्भव व देशी सभी प्रकार के शब्दों का सुंदर और सार्थक उपयोग किया गया है। अज्ञेय को काव्य के आरंभ में तत्सम शब्दों के प्रयोग की अधिकता के कारण अभिजात्य वर्ग का कवि भी कहा जाने लगा। चक्रांत शिला–16 कविता में अज्ञेय लिखते है कि–

"मैं कवि हूँ
दृष्टा, उन्मेष्टा
संद्याता
अर्थवाह
मैं कृतव्यय
X X X
तू काव्य
सदा दृ वेष्टित यथार्थ
चिर दृ तनिक
भारहीन, गुरु
अव्यय।"[5]

अपनी काव्य यात्रा में धीरे– धीरे अज्ञेय तद्भव, और देशज शब्दों की ओर बढ़ते है। अज्ञेय ने अपने काव्य में मड़िया, औघड़, मांजना, गठ्ठे, ठाठ, खाट, परजातंतर आदि देशज शब्दों का प्रयोग भी किया है। काव्य में बहुलता में सर्वनाम शब्दों का प्रयोग करने का कार्य भी अज्ञेय द्वारा हुआ। जिसका कारण बताते हुए रामस्वरूप चुतर्वेदी कहते है कि "सर्वनामों का प्रयोग यहाँ केंद्रीय हो जाता है, क्योकि सर्वनाम अपने रूप में पूरी तरह से तद्भव हैं। हिंदी की सर्वनाम शब्दावली में एक भी प्रयोग तत्सम नहीं। सर्वनामों के साथ क्रिया–रूपों की तद्भवता और उनका देसीपन बढ़ता है।३ तत्सम से तद्भव होने की जो प्रक्रिया अज्ञेय से आरंभ हुई थी, अब देसीपन की ओर बढ़ रही है, जो एक प्रकार से अन्वेषी काव्य यात्रा की स्वाभाविक परिणति कही जा सकती है।"[6] अज्ञेय के द्वारा काव्य में सर्वनाम शब्दों का प्रयोग हुआ उसी का परिणाम है कि कविता की भाषा आम–जन का रूप ग्रहण कर रही है।

कविता में व्यंग्य की बहुत सार्थक महत्ता होती है। कवि व्यंग्य का उपयोग करके जटिल बात को भी सरलता से अभिव्यक्त कर देतें हैं। जिससे उसकी अर्थवत्ता बढ़ जाती है। हिंदी साहित्य में व्यंग्य की परंपरा कबीर के काव्य से स्थापित होती है। और विभिन्न परिवर्तनों के साथ वर्तमान समय तक साहित्य में प्रयोग होती आई है। अज्ञेय ने भी यदा–कदा अपनी कविताओं में व्यंग्य को स्थान दिया है। फिर भी व्यंग्यात्मकता भी उनकी भाषा की एक विशेषता है। किसी भी बात को सीधे कह देने की अपेक्षा व्यंग्यात्मक लहजा ज्यादा मारक होता है और अज्ञेय भी इससे चूकते हुए नजर नहीं आते है। जहाँ एक ओर अज्ञेय 'साँप' नामक अपनी कविता के माध्यम से नगर सभ्यता पर व्यंग्य करते है वहीं दूसरी ओर पंडितों पर भी व्यंग्य करते हैं। इस कविता में पंडिज्जी की पोथी से फ़क़त आदमी बनने की कथा वर्णित है–

"अरे भैया,
पंडिज्जी ने पोथी बंद कर दी है।
पंडिज्जी ने चश्मा उतार लिया है।
पंडिज्जी ने आँखे मूद ली है।
पंडिज्जी चुप से हो गये है। भैया, इस समय
पंडिज्जी
फकत आदमी हैं"[7]

अज्ञेय एक ऐसे कवि है जो 'मौन' को भी महत्व देते है जहाँ भाषा का या शब्दों का प्रयोग नहीं करते वहाँ मौन हो जाते है और यह मौन अज्ञेय को विशेष प्रिय है। जो उनके लगभग समस्त काव्य में दिख जाता है। ऐसा शायद इसलिए है कि अज्ञेय बौद्ध धर्म से प्रभावित थे और बौद्ध धर्म में मौन का बहुत महत्व है। अज्ञेय के काव्य में मौन की भाषा भी महत्वपूर्ण स्थान रखती है। उसके माध्यम से अपने भाव प्रस्तुत करने के साथ–साथ पाठक या श्रोता को भी स्पेस देते है। रचनाकार के साथ–साथ वह भी जीवन, समाज, राष्ट्र को समझने का प्रयत्न करें। और सत्य को अभिव्यक्त करने का आह्वान भी करते है–

"जिसे बाँध तुम नहीं सकते
उसमें अखिन्न मन बहो।
मौन ही अभिव्यंजना है जितना
तुम्हारा सच है उतना ही कहो।"[8]

अज्ञेय मौन को भी अभिव्यंजना का साधन मानते है न कि सिर्फ भाषा को। देखकर आश्चर्य होता है कि जहाँ शब्दों के प्रति अज्ञेय की इतनी आसक्ति है कि उन्हें कहना पड़ता है कि "आज तुम शब्द न दो, न दो, कल भी मैं कहूँगा"[9] अर्थात जब तक कवि को शब्द नहीं मिल जाते वह माँगता रहेगा, वहीं दूसरी ओर मौन का भी गहन स्वीकार्य है। यहाँ अज्ञेय एक द्वंद्व की स्थिति में नजर आते हैं। इस सन्दर्भ में रामस्वरूप चुतर्वेदी का कथन सार्थक प्रतीत होता है कि "अपने संश्लिष्ट गठन के माध्यम से भाषिक अर्थों की टकराहट और उससे वैविध्य और विस्तार से जीवन में सार्थकता की अनुभूति निष्पन्न कराते चलना साहित्य का मुख्य दायित्व है।"[10]

अज्ञेय ने अपनी कविताओं में विविध प्रकार के नवीन बिम्बों का भी प्रयोग किया है। अगर देखा जाए तो बिम्बों का सर्वप्रथम प्रयोग पश्चिम में हुआ और हिन्दी साहित्य में बिम्बों की शुरुआत आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने की और बाद में छायावाद मे भी बिम्बों का बहुत अधिक प्रयोग हुआ। हालाँकि प्रसाद काव्य के कई सारे बिम्ब अज्ञेय को भी प्रिय है जैसे– निर्झर प्रत्यंचा, टूटता तारा, सूना नम, पक्षी आँसू आदि। अज्ञेय की कविता में बिंम्बों को जो स्थान मिला; उसमें अन्य दूसरे कवि असफल दिखाई देते हैं।

'अज्ञेय की कविताओं में वस्तुपरक बिम्ब, प्रकृति बिम्ब, भाव बिम्ब, ऐन्द्रीय बिम्ब (दृश्य बिम्ब, श्रव्य बिम्ब, घ्रातव्य बिम्ब, आस्वाद्य बिम्ब और स्पृश्य बिम्ब) आदि का प्रयोग प्रचुर रूप से देखा जा सकता है। कहना न होगा कि अज्ञेय ने अपनी कविताओं में नवीन बिम्बों की सृष्टि की और प्राचीन बिम्बों को अनुभव के आधार पर नया अर्थ दिया। असाध्य वीणा कविता में ध्वनि बिम्ब इस प्रकार आता है–

"चीड़–वनों में गन्ध–अन्ध– उन्मद पतंग की जहाँ–वहाँ टकराहट
जल– प्रताप का प्लुत एकस्वर।
झिल्ली–दादुर, कोकिल–चातक की झंकार पुकारों की यति में
संसृति की साँय–साँय।"[11]

अज्ञेय ने रति, आक्रोश उल्लास, करुणा, लालसा, सुख–दूख आदि से सम्बन्धित विविध प्रकार के भाव बिम्बों की भी रचना की है। इसके अतिरिक्त अज्ञेय ने मानव और प्रकृति सम्बन्धी विविध प्रकार के बिम्बों का विधान किया है। इस प्रकार अज्ञेय विविध बिम्बों का विधान रचते है। जिस प्रकार जयशंकर प्रसाद के यहाँ बिम्ब प्रतीक बनने की ओर उन्मुख हैं उसी प्रकार अज्ञेय में भी। साहित्य और प्रतीक का सम्बंध अनन्त काल से है। संवेदना में परिवर्तन के साथ– साथ प्रतीक के स्वरूप और अर्थ में भी परिवर्तन होता है। लेकिन सृष्टि की विकास क्रम में कुछ प्रतीक चिर स्थाई हो गए है। प्रयोगवाद व अज्ञेय के संदर्भ में आलोचकों द्वारा कहा गया है कि उन्होंने पुराने प्रतीकों का विरोध किया किया है और नए प्रतीकों को सृष्टि करने का आह्वान किया है। लेकिन अज्ञेय स्वयं आत्मनेपद में लिखतें है कि "कुछ विशेष प्रतीक रूप ऐसे होते है जो चिरकाल के लिए स्थिर हो जाते है, व्यापक हो जाते है। यह इसलिए है कि प्रतीक वास्तव में ज्ञान का उपकरण है। जो सीधे–सीधे अभिधा में नहीं वैधता उसे आत्मसात करने या प्रेषित करने के लिए प्रतीक काम देते है। जो जिज्ञासाएँ सनातन है उनका निराकरण करने वाले प्रतीक भी सनातन हो जाते है।"[12] अज्ञेय प्रतीकों को ज्ञान का उपकरण मानते है इसलिए वह ज्ञान और प्रतीकों के विकास क्रम को साथ–साथ महत्व देते चलते हैं। विकास–क्रम को न समझपाने के कारण आलोचकों ने उन्हें पुराने प्रतीकों का विरोधी माना है। हर युग में ज्ञान और संवेदना में परिवर्तन होता है इस परिवर्तन के कारण नए प्रतीक साहित्य में अपना स्थान ग्रहण करते जाते है।

अज्ञेय ऐसे कवि हैं जिन्होंने एक छोटी सी मछली को जिजीविषा का प्रतीक बनाया है। अज्ञेय के यहां पुराना हारिल प्रतीक अस्तित्व का प्रतीक है। हारिल और मछली के समान ही अज्ञेय काव्य के अन्य प्रतीक है– सागर, हरी घास और धूप। धूप स्वच्छता और उर गरमाहट का प्रतीक है जो आलिंगन में प्राप्त होता है। अज्ञेय के ये सभी प्रतीक मुक्ति से जुड़े हुए है अर्थात नभ में हारिल और सागर में मछली अज्ञेय के काव्य में व्यक्ति स्वातंत्र्य की खोज के प्रतीक हैं जिन्हें कभी शून्य नभ तो कभी सागर घेरता है। अज्ञेय ने अपने काव्य में प्रतीकों का सार्थक प्रयोग भी किया है। 'हरी घास पर क्षण भर', 'बाबरा अहेरी', 'इंद्रधनुष रौदे हुए', कितनी नावों में कितनी बार' इस दृष्टि से उल्लेखनीय काव्य संग्रह है। नदी के द्वीप कविता में प्रतीकात्मकता इस प्रकार है–

"हम नदी के द्वीप हैं।
हम नहीं कहते की हम को छोड़
कर स्त्रोत वाहिनी बह जाए।
वह हमें आकर देती है।
हमारे कोण, गलियाँ, अंतरीप
उभार, सैकत कुल
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी है।
माँ है वह। है, इसी से हम बने हैं।"[13]

व्यक्तिवादी होने का आरोप निरंतर आगे के ऊपर लगाया जाता रहा है। लेकिन इस कविता में द्वीप मनुष्य और नदी समाज के प्रतीक के रूप में है। मनुष्य का निर्माण और परिष्कार समाज के माध्यम से ही होता है। इस संदर्भ में यह कहना समाचीन प्रतीत होता है कि "अज्ञेय की नए कवि के रूप में महत्वपूर्ण उपलब्धि प्रकृति के नवीन चेतना का उद्भास प्रतीक, बिम्ब, नाद, योजना और शब्दों की तराश आदि रूपों में अन्यतम है। सागर, मछली, रेत, चिड़िया, अंधेष आदि कितने ही पुराने प्रतीकों में उन्होंने नए अर्थ का संचार किया है।"[14]

हिंदी कविता में द्विवेदी युग तक छंद कविता में अनिवार्य माना गया। छायावाद और उसके बाद के कवियों ने आधुनिक भावबोध और व्यक्तिगत अनुभूतियों को व्यक्त करने में छंद सहायक की अपेक्षा बाधक सिद्ध होने लगा। छंद के लिए अनिवार्य नियम पूर्ण करने से भाव सम्प्रेषण में बाधा उत्पन्न होने लगी।

इसीलिए मुक्त छंद में काव्य रचना आरंभ हुई। लेकिन मुक्त छंद में काव्य रचना आरंभ होने से पद्य और गद्य की भाषा को लेकर आलोचकों में मतभेद उत्पन्न होने लगें जिसके सन्दर्भ में अज्ञेय ने कहा है कि "गद्य की एक लय होती है यह मान लेने में मुझे कोई कठिनाई नहीं है, लेकिन गद्य का एक छंद होता है यह मैं बिना परिभाषाक व्याख्या के स्वीकार नहीं करूँगा३ छंद की चर्चा में प्रायः उन चीज़ों का उल्लेख होता है जिन्हें हमने अर्थात समकालीन कवियों ने छोड़ दिया। ये चीजें पहले छंद का अंग मानी जाती थीं, एक–एक करके हम पहचानते गए कि इनके बिना भी हमारा काम चलता है। लेकिन लय पर आकर हम लोग अटक गएः हमने माना कि लय के बिना काम नहीं चलता –अर्थात अगर कविता है तो लय है; अगर लय नहीं है तो काव्य और गद्य में भेद का आधार नहीं रहता।"[15] अज्ञेय लय को कविता का अनिवार्य गुण मानते है जो कि गद्य और पद्य की भाषा को अलग करती है। अज्ञेय ने इसी लय को अपनाते हुए कुछ प्रगीत भी लिखे है जिनके अंतर्गत बहर और लोकधुन आदि है। इनके काव्य में ध्वन्यात्मकता भी विद्यमान है। असाध्य वीणा कविता इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

अज्ञेय के काव्य में अप्रस्तुत विधान और नाटकीयता महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अज्ञेय किसी भी भाव, विचार का चित्रण करते समय नाटकीय भंगिमा का सहारा जरूर लेते है। उनकी कविता का यह स्थाई गुण है। अप्रस्तुत विधान में अज्ञेय उपमानों की ताजगी की पक्षधरता करते है। व्यक्ति मन की जटिल अनुभूतियों को उपमानों के माध्यम से मूर्त रूप दे देते है। अज्ञेय ने ऐसे उपमानों का प्रयोग करके अपनी अभिव्यक्ति को सुंदर बनाया जिसका सबसे महत्वपूर्ण कारण रहा उनकी प्रयोगशीलता। "प्रयोगः वैशिष्टय के नहीं साधरणत्व के लिए यह आज के कवि की सबसे बड़ी समस्या है यों समस्याएँ अनेक है–काव्य विषयक की, सामाजिक उत्तरदायित्व की, संवेदना के पुनः संस्कार की, आदि– किंतु उन सबका स्थान इससे पीछे, क्योंकि यह कवि–कर्म की ही मौलिक समस्या है साधारणीकरण और संप्रेषण की समस्या है और कवि को प्रयोगशीलता की और प्रेरित करने वाली सबसे बड़ी शक्ति यही है। कवि अनुभव करता है कि भाषा का पुराना व्यापकता उसमें नहीं है–शब्दों के साधारण अर्थ में बड़ा अर्थ हम उसमें भरना चाहते है, पर उस बड़े अर्थ की पाठक के मन में उतार देने के साधन अपर्याप्त है। वह या तो अर्थ कम पाता है या कुछ भिन्न पाता है।"[16] साधारणीकरण और संप्रेषण ही कवि की प्रयोगशीलता का मुख्य कारण है।

निष्कर्षतः प्रयोग मनुष्य सभ्यता और संस्कृति के विकास का सबसे महत्वपूर्ण कारक है। साहित्य में भी प्रयोगशीलता महत्वपूर्ण है क्योंकि वह साहित्य को जड़ होने से बचाती है। अज्ञेय ने कविता की भाषा और शब्दों को अर्थ संप्रेषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना है। इनके काव्य की विशेषता है– शब्दों का सीमित प्रयोग। अज्ञेय ने शब्दों का सीमित प्रयोग करते हुए भी अर्थ की गम्भीरता और भावों का सम्प्रेषण कहीं बाधित नहीं होने दिया। साथ ही साथ शिल्प के अन्य अंग बिम्ब, प्रतीक, नाटकीयता, अप्रस्तुत विधान, व्यंग आदि को नई धार दी। इन सभी काव्यांगों के प्रचलित रूपों का संरक्षण कर समय के अनुसार उचित बदलाव भी किए गए है। मौन वह भाषा है जिससे कुछ ना कहते हुए भी बहुत कुछ कह दिया जाता है जो श्रोता व पाठक के अन्तस् में गंभीर प्रभाव उत्पन्न करती है। यही प्रभाव लेकर अज्ञेय का 'मौन' हिंदी काव्य की महत्वपूर्ण निधि बना है जिसके माध्यम से भाव संप्रेषण का नया मार्ग हुआ। अतः कहा जा सकता है कि अज्ञेय का काव्य हिंदी काव्य धारा में अमिट छाप रखता है।

सन्दर्भ

1. आधुनिक काव्य प्रवृत्तियां, सम्पादक डॉ. चन्द्र त्रिखा, प्रकाशन हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला प्रथम संस्करण 2002, पृष्ठ संख्या112
2. वहीं, पृष्ठ संख्या 114
3. सन्नाटे का छंद, संपादक अशोक वाजपेयी प्रकाशन वाग्देवी संस्करण 1997 पृष्ठ संख्या 113
4. हिन्दी काव्य का इतिहास, रामस्वरूप चुतर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या223
5. सन्नाटे का छंद, संपादक अशोक वाजपेयी प्रकाशन वाग्देवी संस्करण 1997 पृष्ठ संख्या 111
6. हिन्दी काव्य का इतिहास, रामस्वरूप चुतर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या223
7. नदी की बाँक छाया, अज्ञेय, राजपाल एण्ड सन्स, संस्करण 1981 पृष्ठ संख्या 31
8. सन्नाटे का छंद, संपादक अशोक वाजपेयी प्रकाशन वाग्देवी संस्करण 1997 पृष्ठ संख्या 77
9. वहीं पृष्ठ संख्या 60
10. हिन्दी काव्य का इतिहास, रामस्वरूप चुतर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या206
11. सन्नाटे का छंद, संपादक अशोक वाजपेयी प्रकाशन वाग्देवी संस्करण 1997 पृष्ठ संख्या 113
12. आत्मनेपद, अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ काशी, प्रथम संस्करण1960 पृष्ठ संख्या 45
13. सन्नाटे का छंद, संपादक अशोक वाजपेयी प्रकाशन वाग्देवी संस्करण 1997 पृष्ठ संख्या 50
14. आधुनिक काव्य प्रवृत्तियां, सम्पादक डॉ. चन्द्र त्रिखा, प्रकाशन हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला प्रथम संस्करण 2002, पृष्ठ संख्या113–114
15. हिन्दी काव्य का इतिहास, रामस्वरूप चुतर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या211
16. आत्मनेपद, अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ काशी, प्रथम संस्करण 1960 पृष्ठ संख्या 36